दैनिक जागरण
आलोचना सुधार की आधारशिला रखती है

# विशिष्ट व्यक्तियों की सुरक्षा

विशेष सुरक्षा समूह यानी एसपीजी को लेकर विपक्ष और खासकर कांग्रेस की ओर से जैसा हंगामा खड़ा किया गया उससे यही अधिक प्रकट हुआ कि इस विशेष दस्ते की सुरक्षा विशिष्टता का परिचायक बन गई है। आखिर विशिष्ट व्यक्तियों के लिए सुरक्षा आवश्यक है या फिर किसी खास दस्ते का सुरक्षा घेरा? जो भी सोनिया गांधी परिवार की सुरक्षा व्यवस्था बदले जाने पर आपत्ति जता रहे हैं वे यह ध्यान रखें तो बेहतर कि प्रारंभ में एसपीजी का गठन प्रधानमंत्री की सुरक्षा के लिए ही किया गया था। बाद में पूर्व प्रधानमंत्रियों और उनके परिजनों को भी उसके दायरे में ले लिया गया। इसी के साथ विशिष्ट व्यक्तियों की सुरक्षा को प्रतिष्ठा का प्रश्न बना दिया गया। एसपीजी सुरक्षा वाले विशिष्ट से अति विशिष्ट और साथ ही कहीं अधिक बड़े कद वाले नेता समझे जाने लगे। यह सोच सुरक्षा को व्यक्ति विशेष की विशिष्टता से जोड़ने का ही नतीजा है कि बड़ा और रसूख वाला नेता वही जिसकी सुरक्षा व्यवस्था खास किस्म की हो।

गांधी परिवार की सुरक्षा बदले जाने को उनकी सुरक्षा से खिलवाड़ बताने वाले शायद यह जानने की जरूरत ही नहीं समझ रहे कि अभी तक कम से कम चार बार एसपीजी संबंधी कानून में संशोधन किए जा चुके हैं। इनमें से कई संशोधन तब किए गए जब कांग्रेस की या उसके समर्थन वाली सरकार थी। यदि अब यह व्यवस्था की जा रही है कि मौजूदा प्रधानमंत्री के अलावा पूर्व प्रधानमंत्री को पांच साल तक एसपीजी सुरक्षा हासिल होगी तो आखिर इसमें गलत क्या है? जब गांधी परिवार की सुरक्षा कम करने जैसा कोई कदम उठाया ही नहीं गया तो फिर हंगामा क्यों? यह हंगामा किस तरह गांधी परिवार को अति विशिष्ट बताने के इरादे से किया गया, यह इससे जाहिर होता है कि कुछ समय पहले जब पूर्व प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह की एसपीजी सुरक्षा वापस ली गई थी तो किसी ने सवाल नहीं उठाया। इसके पहले पूर्व प्रधानमंत्री चंद्रशेखर, इंद्र कुमार गुजराल और पीवी नरसिंह राव की भी एसपीजी सुरक्षा वापस ली गई थी। ऐसा तभी किया गया जब इन सबके लिए खतरे का अंदेशा कम हो गया था। वास्तव में यही सही तरीका है। सुरक्षा का स्तर खतरे की आशंका से तय होना चाहिए, न कि नेता विशेष के हिसाब से। गांधी परिवार की सुरक्षा हटाई नहीं गई है, बल्कि उसे बदला गया है। अब उसे सीआरपीएफ की जेड प्लस सुरक्षा उपलब्ध होगी। आखिर सुरक्षा के जैसे घेरे में गृहमंत्री हैं उसमें गांधी परिवार क्यों नहीं रहना चाहता? किसी की सुरक्षा का स्तर बदले जाने को इस तरह पेश करना ठीक नहीं कि केंद्र सरकार उसकी सुरक्षा की परवाह नहीं कर रही।

# जरूरी है यह सख्ती

बिहार जैसे राज्य में सड़क पर वाहन लेकर निकलने वालों के लिए ड्राइविंग लाइसेंस देने की प्रक्रिया का सख्त होना अत्यंत जरूरी है। नए मोटर कानून में लर्निंग से लेकर स्थायी ड्राइविंग लाइसेंस जारी करने के लिए नियमों में जो परिवर्तन किए गए हैं उससे दलालों पर थोड़ा अंकुश तो लगेगा, लेकिन ये फिर इसकी कोई न कोई काट निकाल ही लेंगे। इसलिए जरूरत यह है कि यातायात नियमों की जानकारी शिक्षा के पाठ्यक्रम में शामिल हो। आम आदमी की जरूरतों को ध्यान में रखते हुए जिस तरह सरकार ऑनलाइन सुविधाएं बढ़ा रही हैं, उसको देखते हुए सिर्फ यातायात ही नहीं दूसरे क्षेत्रों में हो रहे नियमों-कानूनों में बदलाव की भी जानकारी शैक्षिक पाठ्यक्रमों में शामिल करना जरूरी हो गया है। स्कूली बच्चों को नए नियमों-कानूनों की जानकारी देने को केंद्र और राज्य के शिक्षा बोर्ड को हाईस्कूल या इंटरस्तर के शिक्षा के पाठ्यक्रमों में लिखित विषय के साथ यह भी प्रावधान करना चाहिए कि कम से कम सप्ताह में एक दिन घंटे भर ऐसी क्लास लगे जिसमें किसी विषय विशेषज्ञ को आमंत्रित किया जाए और वह नए नियमों-कानूनों से बच्चों को अवगत कराए। पुराने मोटर कानून में 18 की उम्र होने पर लर्निंग लाइसेंस के लिए आवेदक परिवहन कार्यालय बामुश्किल जाते थे, दलाल घर में ही उनसे फॉर्म पर दस्तखत करा लेते थे और मनमाना पैसे लेकर बाबुओं से सेटिंग कर लाइसेंस बनवाकर घर पहुंचा देते थे। कुछेक साल पहले ऑनलाइन आवेदन की प्रक्रिया शुरू हुई तो थोड़ा अंकुश लगा। अब लर्निंग लाइसेंस के लिए आवेदन के बाद कंप्यूटराइज्ड टेस्ट की प्रक्रिया काफी हद तक सेटिंग से लाइसेंस हासिल करने पर अंकुश लगाएगी। वाहनों की संख्या और सड़क दुर्घटनाओं में तेजी से हुई वृद्धि को देखते हुए नए परिवहन कानून में जो सख्ती के बाद बिहार में लर्निंग लाइसेंस बनवाने के पहले कंप्यूटराइज्ड टेस्ट देना अनिवार्य हो गया है, इस इम्तिहान में उत्तीर्ण होना जरूरी है तभी लाइसेंस मिलेगा। लर्निंग लाइसेंस मिलने के बाद छह माह में स्थायी लाइसेंस के लिए आवेदन देना होगा और इसके लिए फिर से ड्राइविंग टेस्ट देना जरूरी है। कंप्यूटराइज्ड टेस्ट में आवेदक से यातायात नियमों के बारे में पूछताछ की जाएगी। उम्मीद है कि नई लाइसेंस प्रक्रिया राज्य में सुरक्षित यातायात व्यवस्था कायम करने में मदद करेगी।

> ड्राइविंग लाइसेंस बनाने की प्रक्रिया में सख्ती के साथ यह भी जरूरी है कि कम उम्र के लोग वाहन चलाते दिखें तो उनसे पूछताछ की जाए

# सेना के साये में ही रहेगा पाकिस्तान

विवेक काटजू

**पाकिस्तानी सेना प्रमुख के सेवा विस्तार पर अदालती अवरोध के बावजूद वहां नीतिगत ढांचे और सेना के दबदबे में कोई बदलाव नहीं आने वाला**

कहने को पाकिस्तान एक लोकतंत्र है जहां चुनी हुई सरकार शासन करती है, लेकिन हकीकत इसके उलट है। यहां सेना प्रमुख को देश की सबसे बड़ी हस्ती माना जाता है। फौज का मुखिया वहां एक पेशेवर सैनिक होने के साथ-साथ देश की सबसे ताकतवर सियासी शख्सियत भी होता है। हालांकि सेना के प्रवक्ता और नेता इससे इन्कार करेंगे, लेकिन इससे सेना प्रमुख के निर्विवाद आभामंडल को झुठलाया नहीं जा सकता। मौजूदा सेना प्रमुख जनरल कमर जावेद बाजवा भी इसी परिपाटी का हिस्सा हैं, मगर फिलहाल उनकी बादशाहत को लेकर एक पेच फंस गया है। यह पेच पाकिस्तान के सुप्रीम कोर्ट ने फंसाया है। यह मामला पाकिस्तानी प्रधानमंत्री इमरान खान द्वारा बाजवा को तीन साल के सेवा विस्तार देने से शुरू हुआ। सुप्रीम कोर्ट में 26 नवंबर को सेवा विस्तार के इस फैसले को चुनौती दी गई। लोग यही मान रहे थे कि इस याचिका पर सुनवाई ही नहीं होगी। हालांकि वे तब भौचक्के रह गए जब कोर्ट ने इमरान के फैसले को रद कर दिया। इसके साथ ही अदालत ने फैसले के पक्ष में सरकार से दलीलें तलब कीं। इसके अगले तीन दिनों तक पाकिस्तान में राजनीतिक एवं कानूनी नाटक पूरे चरम पर रहा। यह इमरान और बाजवा दोनों के लिए भारी शर्मिंदगी का सबब बन गया। उनके लिए राहत की बात सिर्फ यही रही कि अदालत ने बाजवा के छह महीने के सेवा विस्तार को हरी झंडी दिखा दी। इसके साथ ही उसने सरकार को भी गुंजाइश दी कि यदि वह सेवा विस्तार को लेकर उपयुक्त कानून बनाए तो अदालत बाजवा के तीन साल के कार्यकाल को बहाल कर देगी। इस तरह हाल-फिलहाल तो इस मामले का पटाक्षेप हो गया, परंतु बड़ा सवाल यही उठता है कि यह सब कैसे और क्यों हुआ और जो हुआ उसके मायने क्या हैं?

पाकिस्तान में सैन्य प्रमुखों को बहुत सम्मान दिया जाता है। पाकिस्तानी संविधान के अनुसार प्रधानमंत्री की सलाह पर राष्ट्रपति उनकी नियुक्ति करते हैं। हालांकि संविधान में उनके कार्यकाल की अवधि पर स्पष्टता नहीं है। यह सेना की परंपरा के अनुसार ही तय किया जाता है। इस परंपरा के तहत सेना प्रमुख को तीन साल का कार्यकाल मिलता है। अतीत में चुनी हुई सरकारों के दौर में सेना प्रमुख तीन साल पूरे करने के बाद सेवानिवृत्त हो जाते थे। इस परिपाटी को पाकिस्तान पीपुल्स पार्टी सरकार के प्रधानमंत्री यूसुफ रजा गिलानी ने तोड़ा। गिलानी ने 2010 में तत्कालीन सेना प्रमुख अशफाक कयानी को तीन साल सेवा विस्तार दिया। चूंकि पाकिस्तान के सैन्य शासकों की शक्ति का स्रोत सेना ही रही है इसलिए अमूमन वे इस पद को छोड़ने के अनिच्छुक रहते हैं। यहां तक कि राष्ट्रपति जैसा शीर्ष पद संभालने के बावजूद उन्होंने सेना प्रमुख का ओहदा नहीं छोड़ा। बहरहाल पाक में पहली बार ऐसा हुआ जब सेना प्रमुख से जुड़ा कोई मामला अदालत में गया हो। इससे पहले कभी किसी ने उनसे जुड़े मामले को अदालत में चुनौती नहीं दी। यदि कोशिश की भी गई होगी तो उसे न्यायाधीशों ने तवज्जो नहीं दी। वहां सेना प्रमुखों के इर्दगिर्द ऐसा आभामंडल रचा गया जिसने नेताओं के साथ-साथ न्यायपालिका को भी हमेशा भयाक्रांत करके रखा। वहां जब भी सैन्य तख्तापलट हुए तब शायद ही नेताओं ने उसके खिलाफ विरोध-प्रदर्शन किया हो। इसी तरह अदालतें भी तख्ता पलट पर मुहर लगाती रहीं, लेकिन इस बार मसला अलग था। ऐसा इसलिए, क्योंकि मौजूदा मुख्य न्यायाधीश आसिफ खोसा अलग मिजाज के माने जाते हैं। उन्होंने सेना प्रमुख की सेवा शर्तों को कानूनी कसौटी पर कसने का फैसला किया। इस तरह उन्होंने ऐसा कदम उठाने से गुरेज नहीं किया जो सत्ता में बैठे लोगों को जरूर खटका होगा।

बाजवा के सेवा विस्तार मामले में इमरान सरकार द्वारा अदालत में की गई पैरवी लचर रही। अदालत ने सरकारी वकीलों से सेवा विस्तार के पीछे कानूनी तर्कों पर सफाई मांगी तो वकील बार-बार अपना रुख बदलते रहे। अदालत में दाखिल उनके लिखित हलफनामे विरोधाभास भरे थे। अदालत ने उनकी धज्जियां उड़ाने से परहेज नहीं किया। इस बीच ऐसी आशंकाएं गहराने लगीं कि यदि मामले ने और तूल पकड़ा और अदालत संतुष्ट नहीं हुई तब बाजवा को इस्तीफा देने पर भी मजबूर होना पड़ सकता है। हालांकि ऐसा नहीं हुआ।

मौजूदा घटनाक्रम के परिप्रेक्ष्य में एक पहलू पर गौर करना होगा। पाकिस्तानी फौज ने प्रधानमंत्रियों को यह विकल्प दिया कि वह योग्य जनरलों में से किसी को सेना प्रमुख के पद पर नियुक्त करें। उसने कभी जोर नहीं दिया कि सबसे वरिष्ठ जनरल को ही सेना प्रमुख बनाया जाना चाहिए। इस तरह जुल्फिकार अली भुट्टो ने जिया उल हक को और नवाज शरीफ ने परवेज मुशर्रफ को सैन्य प्रमुख बनाया। दोनों ही अपने दौर में वरिष्ठतम नहीं थे। भुट्टो और शरीफ ने इस उम्मीद के साथ उन्हें सेना के सबसे ऊंचे ओहदे पर बैठाया कि वे उनके वफादार बने रहेंगे। यह उनकी भारी गलती साबित हुई, जिसकी उन्हें बड़ी कीमत चुकानी पड़ी। जिया ने भुट्टो को फांसी पर चढ़ाया तो मुशर्रफ ने शरीफ को जेल में डाल दिया। इससे स्पष्ट है कि पाकिस्तानी सेना प्रमुख अपने हित भी देखता है। इन हितों की पूर्ति के लिए वह अक्सर सेना में अलोकप्रिय होने की भी परवाह नहीं करता। सेना में तमाम अधिकारियों के लिए सेवा विस्तार में यह तब झलकता भी है जब तमाम सामान्य प्रक्रियाओं को ताक पर रखा जाता है। बाजवा लोकप्रिय सेना प्रमुख रहे हैं, मगर इस प्रकरण के बाद उनकी चमक जरूर कुछ फीकी पड़ेगी। ऐसे में सेना को ऐसे किसी कानून से परहेज नहीं होगा जो सेना प्रमुख के लिए एक से अधिक कार्यकाल की राह में कुछ अवरोध पैदा करे। इसकी भी तमाम वजहें हैं। सबसे बड़ी वजह तो यही है कि पाकिस्तानी सेना देश की सामरिक एवं विदेश नीति पर पूरा नियंत्रण चाहती है। इसमें वह कभी नेताओं या न्यायाधीशों का दखल नहीं चाहेगी। जनरल यही मानते हैं कि वे पाकिस्तान की भौगोलिक सुरक्षा एवं वैचारिक नजरिये के वास्तविक संरक्षक हैं। वैचारिक नजरिये का सरोकार उसी द्विराष्ट्र सिद्धांत से है जिसके आधार पर पाकिस्तान बना। उसमें भारत को हिंदू राष्ट्र माना जाता है और इस नाते वह पाक का स्थाई शत्रु है। बाजवा से जुड़े मौजूदा मामले का इनमें से किसी भी पहलू से कोई लेनादेना नहीं। ऐसे में सेना कभी नहीं चाहेगी कि किसी सेवारत या सेवानिवृत्त सेना प्रमुख को बेवजह उन मामलों को लेकर असहज होना पड़े जिनसे उसकी आभा प्रभावित हो।

सैन्य प्रमुख को लेकर सुप्रीम कोर्ट में चले जबरदस्त नाटक के बाद भी वहां नीतिगत ढांचे में कोई बदलाव नहीं आने वाला। पाकिस्तान में हमेशा फौज हावी रही है और भविष्य में भी ऐसा ही होगा। न ही इस बात के कोई संकेत हैं कि भारत के खिलाफ पाकिस्तानी फौज का रवैया बदलने वाला है। भारत को आहत करने के लिए वह आतंकवाद सहित अपने तरकश में हर एक तीर को आजमाने से नहीं हिचकेगी।

(लेखक विदेश मंत्रालय में सचिव रहे हैं)

response@jagran.com

# उसूलों पर डटे रहने वाले गुजराल

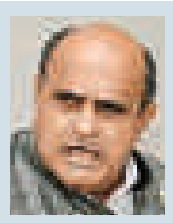

केसी त्यागी

**कई बार राजनीतिक तौर पर नुकसान उठाने के बाद भी गुजराल जीवन भर राजनीतिक शुचिता के पक्ष में खड़े रहे**

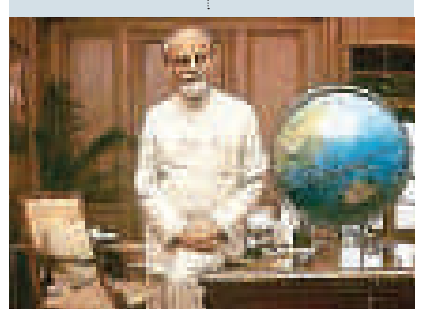

आज यदि इंद्र कुमार गुजराल जीवित होते तो सौ बरस के हो चुके होते। उनका जीवन भारत के पिछले 60 वर्षों की महत्वपूर्ण राजनीतिक घटनाओं का दर्पण है। गुजराल राजनीतिक घटनाक्रम को डायरी की शक्ल देने में माहिर थे। उनकी डायरी में दर्ज बातों को देखकर यह सहज ही समझा जा सकता है कि भारतीय राजनीति किन पड़ावों से गुजरी है। उनके जीवन की ये घटनाएं बताती हैं कि उन्होंने अपने तरीके से दबाव की राजनीति का सामना किया। उन्हें दबाव की राजनीति से जूझने की कला बखूबी आती थी। शालीनता, स्पष्टवादिता के साथ सभ्य समाज की मर्यादाओं में रहकर उन्होंने अपने कर्तव्यों को अंजाम दिया। उनका जन्म 4 दिसंबर 1919 को वर्तमान पाकिस्तान में झेलम के निकट हुआ। उनकी प्रारंभिक शिक्षा लाहौर में हुई। सांस्कृतिक तौर पर समृद्ध गुजराल को बचपन में ही उर्दू और हिंदी साहित्य के नामचीन लोगों की संगत मिली। उस समय के दिग्गज शायरों में शुमार फैज अहमद फैज से उन्हें अंग्रेजी पढ़ने का सौभाग्य मिला। प्रारंभिक दिनों में वह वामपंथी आंदोलनों और विचारों से भी प्रभावित रहे। साहिर लुधियानवी, किशन चंदर, राजेंद्र सिंह बेदी, भीष्म साहनी, अली सरदार जाफरी, कैफी आजमी उनके हमउम्र भी थे और हमख्याल भी। बंटवारे के बाद उनका पूरा परिवार भारत लौटा और दिल्ली को अपनी कर्मस्थली बनाया। कांग्रेसी नेताओं से उनके संबंध बढ़ते गए। इंदिरा गांधी और सुचेता कृपलानी से करीबी का नतीजा यह रहा कि 1964 में गुजराल को राज्यसभा के लिए चुना गया। तब इंदिरा गांधी के करीबी लोगों में उमाशंकर दीक्षित, दिनेश सिंह गिने जाते थे। इन्हीं दिनों यशपाल कपूर ने उनसे कहा था कि आप संवेदनशील स्वभाव के हैं इसलिए श्रीमती गांधी से आपकी ज्यादा नहीं निभेगी। वरिष्ठ मंत्री सी. सुब्रमण्यम ने भी उन्हें नसीहत देते हुए कहा कि श्रीमती गांधी के करीब जाने की कोशिश मत करना, नहीं तो बाहर कर दिए जाओगे। हालांकि सूचना एवं प्रसारण मंत्री बनकर वह श्रीमती गांधी के विश्वस्त साथियों में शुमार हुए। वैसे उन्होंने बाद में यह स्वीकार किया कि इंदिरा जी का व्यक्तित्व काफी जटिल था जिससे उन्हें कई बार दो-चार होना पड़ा।

1971 के लोकसभा चुनाव में श्रीमती गांधी को भारी बहुमत मिला। इसके बाद गुजराल को आवास मंत्री बनाया गया। इसके एक सप्ताह बाद ही श्रीमती गांधी ने उन्हें डांट लगाई कि तुमने अभी तक दिनेश सिंह को सरकारी आवास से निकाला क्यों नहीं? उन्हें धीरेंद्र ब्रह्मचारी के कारण भी इंदिरा जी की नाराजगी का शिकार होना पड़ा। ब्रह्मचारी श्रीमती गांधी के योग गुरु थे। वह गोल डाकखाने के पास अपने आश्रम के लिए अतिरिक्त भूमि चाहते थे। गुजराल ने जब यह आवंटित करने में असमर्थता जताई तो ब्रह्मचारी ने उन्हें चेतावनी दी। कुछ दिनों बाद जब मंत्रिमंडल में फेरबदल हुआ तो उमाशंकर को उनका कैबिनेट मंत्री बना दिया, पर वह भी आश्रम के लिए भूमि की व्यवस्था नहीं करा पाए। इसके कुछ समय बाद दोनों मंत्रालय से हटा दिए गए और कुछ समय बाद पता चला कि ब्रह्मचारी को अशोक रोड पर अतिरिक्त भूमि दे दी गई। ऐसे घटनाक्रमों ने गुजराल को एक सिद्धांतवादी नेता के रूप में गढ़ने का काम किया। हालांकि कई अवसरों पर उन्हें समझौतावादी न होने पर राजनीतिक तौर पर नुकसान भी उठाना पड़ा, लेकिन वह उसूलों पर डटे रहे।

आपातकाल के दौरान इंदिरा गांधी जेपी आंदोलन से भयभीत भी थीं और परेशान भी। सूचना एवं प्रसारण मंत्री होने के नाते गुजराल से उनकी अपेक्षा यह थी कि वह सरकार का मुखौटा बनकर रहें। गुजराल उस दौर को आपत्तिजनक घटनाक्रम के रूप में देखते थे। उनकी डायरी में दर्ज है कि अप्रैल 1976 में एक दिन श्रीमती गांधी ने किस तरह उनसे कहा कि तुम्हारा राज्यसभा का कार्यकाल समाप्त हो चुका है और अब तुम मॉस्को चले जाओ। गुजराल ने अनिच्छा जताते हुए सोवियत संघ के करीबी नेताओं जैसे नुरूल हसन, चंद्रजीत यादव, शशि भूषण आदि का नाम सुझाया और यह भी पूछा कि क्या आप मुझसे नाराज हैं, जो मुझे मॉस्को भेज रही हैं? इस पर श्रीमती गांधी ने कहा कि आप गलत समझ रहे हैं। मैं जिससे नाराज होती हूं उसे मॉस्को नहीं फिजी भेजती हूं। मॉस्को में बतौर राजदूत उन्होंने सोवियत संघ को भारत के और करीब लाने का प्रयास किया। बाद में वह वीपी सिंह सरकार में विदेश मंत्री बने। इसके बाद चंद्रशेखर ने भी गुजराल को विदेश मंत्री बनाने का प्रस्ताव भेजा, जिसे उन्होंने विनम्रतापूर्वक अस्वीकार कर दिया।

1992 में वीपी सिंह उन्हें राज्यसभा में भेजने की संतुति कर चुके थे। मंडल लागू होने के बाद लालू यादव जनता दल में निर्णायक नेता के रूप में स्थापित हो चुके थे और बिहार से गुजराल का राज्यसभा में नामांकन उन्हीं की कृपा पर निर्भर था। लालू ने राज्यसभा के लिए किस तरह उन्हें अपमानित-प्रताड़ित करने का प्रयास किया, यह भी उनकी डायरी में लिखा है। उन्हें बिहार भवन और पटना के कई चक्कर काटने पड़े। तब उनके आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहा जब लालू ने कुछ विधायकों को खरीदने के लिए उनसे पैसे का इंतजाम करने को कहा। इससे पहले लालू उन्हें पार्टी की पसंद का आखिरी उम्मीदवार बनाकर काफी असहज स्थिति में रखे हुए थे। तमाम मशक्कत के बाद लालू उन्हें राज्यसभा भेजने के लिए प्रयत्नशील हुए। गुजराल के सामने इससे भी विषम परिस्थिति तब पैदा हुई जब वह देवगौड़ा के बाद प्रधानमंत्री बने। पहली चुनौती उन्हें लालू यादव के विरुद्ध चारा घोटाले में उनकी संलिप्तता की सीबीआइ जांच को लेकर सामने आई। लालू ने उनसे राहत दिलाने को कहा, लेकिन गुजराल नहीं माने। लालू ने उनसे बिहार के राज्यपाल एआर किदवई को चार्जशीट दाखिल करने की मंजूरी देने में देरी के लिए भी कहा, लेकिन गुजराल कोई समझौता नहीं करना चाह रहे थे। आखिर लालू के खिलाफ चार्जशीट दाखिल हुई।

जब राजीव गांधी हत्याकांड को लेकर गठित जैन आयोग के खुलासे में अपरोक्ष रूप से द्रमुक नेताओं की संलिप्तता दर्शाई गई तो कांग्रेस नेताओं ने द्रमुक कोटे के मंत्रियों को हटाने की जिद पकड़ ली। गुजराल द्वारा इसे अस्वीकार करने के बाद उनकी सरकार गिर गई। आज वही द्रमुक कांग्रेस का सबसे महत्वपूर्ण सहयोगी दल है।

(लेखक जदयू के राष्ट्रीय प्रवक्ता हैं)

response@jagran.com

## ऊर्जा

### जन्म की सार्थकता

ईश्वर की संरचना में सर्वाधिक श्रेष्ठ स्थिति मनुष्य की है। मानव शरीर पाने के लिए देवता भी तरसते हैं। देखा जाए तो सबसे उच्च पायदान पर मानव है। जानवर उससे नीचे हैं, लेकिन जो जितनी ऊंचाई पर रहता है, वह जब गिरता है तो किस निम्न स्तर पर गिरेगा कहा नहीं जा सकता। सबसे उच्च शिखर पर बैठा मनुष्य कभी-कभी जानवर से भी नीचे चला जाता है। किसी मनुष्य पर रोष उतारने के लिए प्रायः जानवरों से तुलना कर दी जाती है, लेकिन जानवर भी अपना पेट पालने के लिए हमेशा एक ही काम करते हैं। जंगल का राजा शेर होता है, लेकिन उसका भी अपना सिद्धांत है। एक तो वह अपने आहार के लिए शिकार खुद करता है और झूठे बासी मांस का भक्षण नहीं करता। इसके अलावा जब उसका पेट भर जाता है तो बचे हुए हिस्से को बांधकर संग्रह नहीं करता। उसे छोड़कर चल देता है। तब बचे हुए हिस्से का भक्षण दूसरे असहाय जानवर करते हैं। इस कारण पर्यावरणविद शेर को जंगल का रक्षक बताते हैं।

गांव से लेकर महानगरों तक धोखाधड़ी, तिकड़म, नारी अस्मिता का चीरहरण जिस घटिया स्तर तक हो रहा है, वह जानवरों से भी निचले स्तर का है। बड़े घनिष्ठ से दिखने वाले दोस्त ही नहीं खुद घर के खून के रिश्ते से बंधे लोग क्या-क्या नहीं कर रहे हैं। सक्षम होते ही माता-पिता को वृद्धाश्रम का रास्ता दिखाना क्या यह अच्छा संस्कार है। सार्वजनिक जीवन में आदर्श, सत्य, संस्कार, धर्म का प्रवचन देने वालों तक की करनी आए दिन लोगों के सामने है। यही सब कारण था कि राजा सिद्धार्थ को मानव-जीवन से नफरत हो गई थी। गोस्वामी तुलसीदास की आत्मा ने उन्हें झकझोर दिया था।

इनके जीवन से यह सीख मिलती है कि घटिया स्तर की सोच जब मनुष्य छोड़ देगा, उसी समय उसका मनुष्य के रूप में जन्म सार्थक होगा। यदि ऐसा नहीं करता तो उसका अगला जन्म क्या होगा, यह तो फिलहाल स्पष्ट नहीं है, लेकिन कु-संस्कार उसके परिवार में घुस गया तो उसकी अगली पीढ़ी गलत रास्ते पर प्रायः चली जाएगी, क्योंकि घर के बच्चे बड़ों की नकल करते हैं।

सलिल पांडेय

# फरिश्ते बनिए, मूकदर्शक नहीं!

सुधीर कुमार

> बतौर नागरिक हमारा प्रथम दायित्व सड़क दुर्घटना में घायल हुए किसी व्यक्ति को समय से अस्पताल पहुंचाना होना चाहिए

दिल्ली सरकार ने सड़क दुर्घटना के शिकार लोगों की मदद करने वाले नागरिकों को सम्मानित और प्रोत्साहित करने के लिए 'फरिश्ते दिल्ली' नाम से एक योजना प्रारंभ की है। इसका मकसद सड़क हादसे का शिकार हुए हर शख्स के लिए सरकारी तथा निजी अस्पतालों में निःशुल्क चिकित्सीय सुविधाएं उपलब्ध कराना तथा सड़कों पर घायल हुए व्यक्ति को अस्पताल तक पहुंचाने के निमित्त राहगीरों को जागरूक बनाना है। इसके तहत सड़क दुर्घटना में घायल व्यक्ति को 'फरिश्ता' बनकर अस्पताल तक पहुंचाने वाले शख्स को सरकार दो हजार रुपये का इनाम देने के अलावा प्रोत्साहन प्रमाण पत्र भी दे रही है। मानवीय संवेदना का उदाहरण प्रस्तुत करने वाले ऐसे शख्स से किसी भी तरह की पूछताछ नहीं की जाती है और न ही उनकी पहचान को सार्वजनिक किया जाता है। पहले लोग इस बात से डरते थे कि अस्पताल पहुंचाने पर उनके लिए समस्या न बढ़ जाए। पुलिस का भी डर रहता था। हालांकि 2016 से ही सुप्रीम कोर्ट के आदेश के बाद देश में घायलों की मदद करने वाले इंसानी फरिश्तों को बेवजह परेशान किया जाना लगभग बंद हो चुका है।

सड़क हादसों में घायल शख्स को अस्पताल तक पहुंचाने की प्रवृत्ति में वृद्धि के लिए कई राज्य सरकारों ने पुरस्कृत करने की योजना बनानी शुरू की है। पुदुचेरी सरकार ने भी घायलों को अस्पताल पहुंचाने वाले इंसानी 'फरिश्ते' को 5 हजार रुपये का इनाम देने की घोषणा की है। केंद्रीय मंत्री नितिन गडकरी ने भी कहा है कि सड़क हादसों में घायलों की मदद करने वाले अब 'वीरता पुरस्कार' के हकदार होंगे। इस तरह की योजना शुरू करने का एक ही मकसद है कि लोग नैतिक कर्तव्य के तहत घायलों की मदद करें। इस तरह की प्रोत्साहन योजना से राहगीरों में घायलों के प्रति सहानुभूति और मानवता का भाव स्थापित करने तथा दुर्घटनाग्रस्त व्यक्ति की मदद के लिए नागरिकों को तत्पर बनाने में मदद मिल सकेगी।

गौरतलब है कि देश में सड़क हादसों में घायल हुए कई व्यक्तियों को 'गोल्डन ऑवर' के भीतर उचित चिकित्सीय सुविधाएं उपलब्ध नहीं हो पाती हैं। किसी भी गंभीर परिस्थिति में मरीज के लिए दुर्घटना के बाद का पहला एक घंटा बेहद अहम होता है। इसे ही चिकित्सीय भाषा में 'गोल्डन ऑवर' कहा जाता है। इस समय में दिया गया इलाज घायलों की जिंदगी को बचाने में काफी महत्वपूर्ण साबित होता है। मालूम हो कि ऐसे 80 फीसद मामलों में घायलों को आपात चिकित्सीय सेवा नहीं मिल पाती है! अंतरराष्ट्रीय सड़क संगठन के मुताबिक दुनिया में सर्वाधिक सड़क हादसे भारत में होते हैं। भारत सरकार के मुताबिक देश में हर साल सड़क दुर्घटनाओं में डेढ़ लाख से भी अधिक लोग मारे जाते हैं। मरने वालों में कई ऐसे भी रहे होंगे जिन्हें अगर समय पर अस्पताल तक पहुंचाया गया होता तो उनकी जान बच गई होती! जाहिर है बतौर नागरिक हमारा प्रथम दायित्व सड़क हादसे में घायल व्यक्ति को अस्पताल पहुंचाना या एंबुलेंस की व्यवस्था करना होना चाहिए।

(लेखक बीएचयू में अध्येता हैं)

## मेलबाक्स

### अव्यावहारिक सुझाव

गुलाम कश्मीर की वापसी का रास्ता शीर्षक से लिखे अपने लेख में कैप्टन आर विक्रम सिंह ने गुलाम कश्मीर के 10 जिलों सहित भारतीय पश्चिमी कश्मीर के चार सीमांत जिलों को मिलाकर एक तीसरा केंद्रशासित प्रदेश बनाने का विचार दिया है। यह प्रस्ताव पढ़ने-सुनने में आकर्षक एवं दिल को सुकून देने वाला है, लेकिन संभवतः वर्तमान परिप्रेक्ष्य में व्यावहारिक नहीं है। कारण, अनुच्छेद 370 की समाप्ति एवं जम्मू-कश्मीर और लद्दाख को दो अलग-अलग केंद्रशासित प्रदेश बनाने से पाकिस्तान पहले से ही बौखलाया हुआ है। उसने इस मामले को विश्व के प्रत्येक मंच से उठाने की कोशिश की है। यह सही है कि उसे उन मंचों से उस तरह का समर्थन नहीं मिला जैसी कि उसकी प्रत्याशा थी, लेकिन चीन, तुर्की तथा मलेशिया जैसे देशों द्वारा उसके सुर में सुर मिलाने से भारत की चिंता बढ़ी है। अब अगर भारतीय नेतृत्व जल्दी में जम्मू-कश्मीर पर इस तरह का कोई आक्रामक फैसला लेता है तो संभव है कि पाकिस्तान की सरकार अपनी जनता का ध्यान भटकाने के लिए भारत के खिलाफ युद्ध पर ही उतर जाए। इधर भारत सरकार ने देश को आर्थिक क्षेत्र में एक महाशक्ति बनाने के लिए बड़े संरचनात्मक बदलावों (यथा-जीएसटी, दिवालिया कानून, रेरा, नोटबंदी आदि) को अपनाया है। इस समय उसका मुख्य ध्यान भारत को 2024 के पूर्व पांच ट्रिलियन डॉलर वाली अर्थव्यवस्था बनाना है। ऐसी स्थिति में क्या भारत पाकिस्तान के साथ युद्ध के हालात के लिए तैयार है? यह एक गंभीर सवाल है।

चंदन कर्ण, देवघर

### दोषियों के मन में भय होना जरूरी

हैदराबाद की घटना हमारी संस्कृति और संस्कारों को आईना दिखाने वाली है। अब तो बेटियां अपने घर में भी सुरक्षित नहीं हैं। हैदराबाद कांड की खबर की स्याही अभी सूखी भी नहीं थी कि राजस्थान में एक बाप ने ही अपनी बेटी की अस्मिता तार तार कर दी। कलियुगी पिता बेटी को जंजीर से बांध कर दुष्कर्म करता रहा। इस तरह की घटनाओं पर लिखने के लिए लेखनी गूंगी हो जाती है। यदि हम इतिहास के पन्नों में झांक कर देखें तो द्रौपदी के चीरहरण के कारण महाभारत का युद्ध हो गया था। रावण ने सीता का हरण किया तो राम ने रावण को यमलोक भेज दिया। अब तो बेटियों की लाज लुटती रहती है, कुछ लोग जुलूस निकालते हैं, खबर बनती है और फिर रद्दी की टोकरी में चली जाती है। परिवार की प्रतिष्ठा के नाम पर कुछ घटनाएं सामने नहीं आतीं और जो घटनाएं सामने आती हैं वे न्यायालय की लंबी प्रक्रिया में उलझ कर रह जाती हैं। वसंत विहार सामूहिक दुष्कर्म कांड को ही ले लीजिए। 2012 से मामला कोर्ट में चल रहा है, लेकिन गुनहगारों को अभी तक फांसी की सजा नहीं दी गई है। दुष्कर्म की घटनाओं पर अंकुश लगाने के लिए दोषियों के मन में भय बैठाना होगा। इसके लिए सरकार को कठोर कानून बनाना होगा। न्यायालय में सुनवाई और निर्णय की समय सीमा तय करनी होगी। यदि बेटियों को बचाना है तो सरकार को तत्काल कानून में संशोधन करना चाहिए। और कठोर से कठोर कानून बनाना चाहिए, ताकि अपराधियों की आत्मा कांप जाए।

रणजीत वर्मा, फरीदाबाद

### दफ्तरों में मिले आत्मरक्षा की ट्रेनिंग

वसंत विहार सामूहिक दुष्कर्म कांड को सात वर्ष हो चुके हैं, लेकिन दोषी आज भी सलाखों के पीछे जीवित हैं। न्यायपालिका ने दोषियों को जो सजा सुनाई है प्रशासन द्वारा उस पर अभी भी विचार हो रहा है और उनकी क्षमा याचिका राष्ट्रपति भवन पहुंच चुकी है। इस पर कुछ फैसला आए उससे पहले ही हैदराबाद में एक डॉक्टर इसी प्रकार की हैवानियत का शिकार हो गई। इस तरह की घटनाओं पर तेजी से कार्रवाई होनी चाहिए, लेकिन कछुए की गति से कार्य हो रहा है। इसका परिणाम यह होता है कि अपराधी इसी प्रकार से फिर अपराध को जन्म देने लगता है। सजा मिलने में देरी के कारण अपराधियों को दर्दनाक हादसे करने की सजा तक का पता नहीं होता। स्कूल-कॉलेज ह